Vol 5, Issue 1, 2022 **Impact Factor:2.58** DOI: https://doi.org/10.31426/ijamsr.2022.5.1.5012

IJAMSR

International Journal of Advanced Multidisciplinary Scientific Research (IJAMSR) ISSN:2581-4281

मृदुला गर्ग के उपन्यासों में महिला लेखन परम्परा का अध्ययन

Sweety Kumari*, Dr. Tabassum Khan

** Research Scholar, Department of Hindi, Sri Satya Sai University of Technology & Medical Sciences, Sehore.*

Research Guide, Department of Hindi, Sri Satya Sai University of Technology & Medical Sciences, Sehore.

सारांश

मानव सभ्यता की विकास–यात्रा के समानांतर स्त्री का संघर्ष भी अपनी निरंतरता में आरम्भ से ही समाज में विद्यमान रहा है। देश–काल के साथ इस संघर्ष के सिर्फ स्वरूप बदलता रहा है। मूल स्वर में सामंती युग से लेकर आज के आधुनिक युग तक एकतानता है। हमारे समाज में स्त्री को कभी रीति–रिवाज के नाम पर तो कभी पितृसत्तात्मक अधिकार भावना के कारण, कभी पुरुष की अहम् भावना के कारण तो कभी शिक्षित होने एवं आत्मनिर्भर होने के कारण सदैव कदम–कदम पर शोषण का शिकार होना पड़ा है। इस शोषण और उसके विरुद्ध स्त्री के नितांत निजी संघर्षों की लंबी एवं करूण कहानी है। उसे न केवल बाह्य समाज बल्कि स्वयं अपने परिवार से और यहाँ तक कि खुद से भी निरंतर संघर्ष करना पड़ा है। इसी संघर्ष को सिमोन द बउआर ने अपनी पुस्तक 'द सेकंड सेक्स' में बताया था कि "स्त्री पैदा नही होती, उसे बना दिया जाता है" यह कथन देश–विदेश की सभी स्त्रियों के संघर्ष को पूर्णतया बयां करता है। भारतीय समाज में तो स्त्री को हमेशा से एक वस्तु के रूप में देखा जाता रहा है। रेखा कास्तकार स्त्री विमर्श के सरोकार पर बात करते हुए कहती हैं कि "स्त्री विमर्श का सरोकार जीवन और साहित्य में स्त्री मुक्ति के प्रयासों से है। नर–नारी संबंध मृदुला गर्ग के प्रायः सम्पूर्ण साहित्य के केन्द्रीय सूत्र रहे हैं। वैसे तो कई उपन्यासकार नर–नारी संबंधों को पारम्परिक, नैतिक मान–मर्यादाओं के घेरे में रखकर चित्रित करते हैं, परन्तु मृदुला जी ने कभी भी इन बन्धनों को स्वीकार नहीं किया। उनका मानना है कि दाम्पत्य जीवन में एकरसता तथा आपसी सामंजस्य न होने के कारण या प्रेम के आभाव के कारण ही विवाहेतर संबंध स्थापित होते हैं।

मुख्यशब्दः मानव सभ्यता, भारतीय समाज, उपन्यासकार, संघर्ष, देश–विदेश

Vol 5, Issue 1, 2022 **Impact Factor:2.58** DOI: https://doi.org/10.31426/ijamsr.2022.5.1.5012

IJAMSR

International Journal of Advanced Multidisciplinary Scientific Research (IJAMSR) ISSN:2581-4281

प्रस्तावना

स्त्री सशक्तिकरण के इस दौर में भारतीय नारी–विषयक दृष्टि की प्रासंगिकता अब पूरे विश्व में सिद्व हो रही है। नारी अब अबला, पराश्रिता, सुकोमला नहीं रही। बडे–बडे संघर्षों, चुनौतियों और संकटों में उसकी रचनात्मकता तथा शक्ति–रूपा छवि अब विशेष रूप से उजागर होने लगी है। वह दया, क्षमा स्नेह, वात्सल्य तथा महत्व की प्रतिमूर्ति तो है ही, परिवार, समाज तथा राष्ट्र के निर्माण और विकास में भी हर प्रकार से सक्रिय एवं समाहित दिखने लगी है। वह श्रृद्वा और सम्मान की अधिकारिणी तो सदा से रही है, परन्तु अब वह कर्मशील, कौशलयुक्त तथा अधिकार सम्पन्न छवि के साथ अपनी नई भूमिका में अग्रसर हो रही है। प्राचीन युग में नारी के अविधा माया रूप की स्वीकृति नहीं हुई थी, किन्तु विद्या माया रूप सदैव स्तुत्य एवं वंदनीय रहा है। आज विधि के क्षेत्र में, इंजीनियरिंग के क्षेत्र में, चिकित्सा के क्षेत्र में, रक्षा एवं युद्व के क्षेत्र में, नक्षत्र–विज्ञान या अन्य वैज्ञानिक तकनीकी क्षेत्रों में किसी से पीछे नहीं। भारत ने प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में स्त्री–शक्ति और सामर्थ्य को भली प्रकार उजागर किया है। एक समय था जब स्त्री चार दिवारी में बंदी थी। उसके पास अधिकार नहीं थे। अब वे सब स्वप्न की बातें होती जा रही है। स्त्री ने हमारी व्यवस्था के दोषों और उससे प्राप्त हुए संघर्षों का पूरा इतिहास जी लिया है।अब उसके भीतर एक ज्वलन्त संघर्षशील तथा लक्ष्यगामी महाशक्ति की प्रतिष्ठा होने लगी है। यह हम सभी के लिए गौरव का विषय है। पूरे विश्व में यों स्त्री के साथ कम अन्याय नहीं हुआ है। पुरूष प्रधान व्यवस्था में वह सदैव अपने को शोषित एवं हाशिये पर खडा पाती रही है। संघर्ष का नैरन्तर्य उसे बार–बार अपनी भूमिका में सोचने और कुछ करने को बाध्य करता रहा है। संस्कृत युग से आज तक यदि हम स्त्री संघर्ष की गाथा लिखें तो हमारे सामने सैकड़ों उदाहरण ऐसे आ जाते हैं जिसमें स्त्री ने हर कार्य एवं कार्य क्षेत्र में आदर्श उदाहरण स्थापित किए हैं।

भूमिका :–

1947 की स्वतंत्रता प्राप्ति की घटना ने भारतीय जन जीवन को सर्वथा नवीन मोड़ दिया। स्वत ंत्रता प्राप्ति की घटना क्षणिक आनन्ददायी सिद्ध हुई। राष्ट्र विभाजन का सबसे पहला हृदय विदारक आघात लगा। राष्ट्र के विभाजन के फलस्वरूप अनेक प्रांतो में सांप्रदायिक दंगे भड़क उठें। देश में भीषण नर संहार के उपरान्त अहिंसा एवं शांति दूत महात्मा गाँधी की हत्या का अस्हाय दुःख सहन करना पड़ा। आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक तथा नैतिक विघटन तो स्वतंत्रता से पूर्व भी था किन्तु राजनीतिक विघटन या सत्ता की स्वार्थपरता ने भ्रष्टाचार को ओर अधिक बढ़ावा दिया। इस कारण अमीर ओर अधिक अमीर तथा गरीब ओर अधिक गरीब। सामाजिक, आर्थिक विकास तथा समानता के आश्वासनों ने इस खाई को कम करने के बदले और अधिक चौड़ा करने का कार्य किया। इससे समाज में महंगाई, बेकारी, भ्रष्टाचार, लाल फिता–शाही, जातिवाद, क्षेत्रीयता, भाई–भतीजावाद तथा स्वार्थपूर्ण राजनीति को बढ ावा दिया इस कारण जनता का मोह भंग हो गया। साथ ही औद्योगीकरण एवं यांत्रिकीकरण के कारण मानव भी एक संवेदनहीन यंत्र बनता जा रहा था। हिन्दी साहित्य जगत में होने वाले परिवर्तन को डॉआशा मेहता ने कहा कि – ''मोह भंग की निराशा लिये पुरानी पीढ़ी के साहित्यकार अपनी भावनाओं को व्यक्त कर रहे थे जबकि नये साहित्यकारों की अभिव्यक्ति कटु, यथार्थपरक एवं व्यंग्यात्मक है। नयी पीढ़ी के साहित्याकारों पर पश्चिम के व्यक्तिवाद एवं अस्तित्ववादी विचारधाराओं ने बुद्धिजीवी वर्ग को सर्वाधिक प्रभावित किया।''1

International Journal of Advanced Multidisciplinary Scientific Research (IJAMSR) ISSN:2581-4281

औद्योगिकरण तथा व्यक्तिवादिता की अति ने मानव को अंतर्मुखी स्वकेन्द्रित और कहीं कहीं कुण्ठाग्रस्त बना दिया। जिससे वह समाज में रहकर भी अकेला एवं अजनबी हो गया। इसी कारण वह संत्रास, ऊब, हताशा–निराशा और असहजता का शिकार होने लगा। इसका प्रभाव 20वीं सदी के उत्तरार्द्ध के कथाकारों पर भी पड़ा और उन्होंने अपनी कहानियों, उपन्यासों एवं नाटकों के माध्यम से इनकी अभिव्यक्ति का प्रयास किया। इस दोरान समाज में व्यक्ति प्रमुख हो गया और उसे साहित्य में विशेष स्थान मिला। इस युग में कथाकारों ने व्यक्ति के सम्पूर्ण अस्तित्व के चित्रण के साथ–साथ समाज व देश के उपेक्षित वर्ग को भी साहित्य में स्थान प्रदान किया जिसमें ग्राम्य जीवन एवं सामाजिक स्तर पर स्त्री, दलीत वर्ग, कृषक वर्ग एवं गरीब वर्ग को लिया जा सकता हैं। इनका अधिक से अधिक चित्रण कर इस उपेक्षित वर्ग को समाज के सामने प्रस्तुत किया। फलस्वरूप सबका ध्यान इनकी तरफ आकर्षित हुआ और इसे सुधारने एवं सहयोग देने की प्रवृति सामाजिक एवं राजनीतिक स्तर पर प्रारंभ हुई। इस समय में साहित्यकारों में एक बहुत बड़ा वर्ग महिला कथाकारों का भी हुआ जिन्होंने अपनी कहानियों का आधार मात्र स्त्री को ही रखा। क्योंकि वे एक महिला है और महिलाओं की स्थिति को स्वयं भोगा है अतः उसे वे बखूबी चित्रित कर सकती है। सन् 1980 के बाद इस प्रकार की लेखिकाओं की संख्या तेजी से बढ़ने लगती है। और वे स्त्री से संबधित विविध पक्षों पर अपनी राय रखती हुई कहानी लेखन का कार्य करती है। डॉ. त्रिपाठी ने कहा है कि – ''वैज्ञानिक युग में जाति प्रथा, अंधविश्वास, स्वर्ग नर्क, सांप्रदायिक भावना एवं पुरातन मूल्यों का कोई स्थान नही रहा।''1

भारतीय संस्कृति में नारी –

भारतीय संस्कृति में नारी को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। इसे सृष्टि का आधार कहा गया है। वेदों एवं पुराणों में भी कहा गया है कि ''यत्र नार्यस्तु पुज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता''। इस प्रकार किन्हीं अपवादों को छोड़कर भारतीय संस्कृति में नारी को पूजनीय माना जाता है। और वर्तमान में भी कहा जाता है कि जिस घर में स्त्री का मान सम्मान बराबर रूप में होता है चाहे वह माँ, पत्नी, पुत्री या बहन किसी भी रूप में हो, वहां लक्ष्मी रूपी धन सुख एवं शांति अधिक मात्रा में पाई जाती है।

हिन्दी साहित्य में वर्णित नारी –

हिन्दी साहित्य के विभिन्न युगों के साहित्य में नारी का विविध रूपी चित्रण किया गया है। आदिकाल में जहाँ इसे समभाव से चित्रित कर इसके श्रृगांरिक रूप का चित्रण किया गया। वहीं भक्तिकाल में तुलसीदास जी ने इसे ''ढ़ोल गँवार शुद्र पशु नारी, सकल ताड़ना के अधिकारी''1 तक कहकर इसे धर्म के नियमों में बाँधने की बात कही है। रीतिकाल में इसे राजा महाराजाओं के मनोरंजन का साधन मानते हुए इसे श्रृंगार एवं भोग की वस्तु माना है। आधुनिक काल में शिक्षा के प्रचार प्रसार के साथ ही स्त्री को पुरुष के समक्ष ही मानने पर बल दिया गया। और स्त्री व पुरुष एक दूसरे के पुरक बन गए। आशारानी व्होरा ने 1950 के बाद की नारी प्रगति को इस रूप में व्यक्त किया है – ''सदी के प्रथम 40–50 वर्षो को नारी जागरण का युग कहा जा सकता है और स्वतंत्रता के पश्चात् जो दूसरा युग प्रारम्भ होता है उसे नारी प्रगति का।''2

IJAMSR

International Journal of Advanced Multidisciplinary Scientific Research (IJAMSR) ISSN:2581-4281

बीसवीं सदी के साहित्य में नारी –

बीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध के साहित्य में नारी के निहायत अलग एवं स्वच्छंद रूप का चित्रण हुआ है। वह किसी के बहकाने में न रहकर स्वतंत्र जीवन जीना चाहती है। अपने संपूर्ण व्यक्तित्व का विकास करती हुई स्त्री–पुरुष के साथ कंधे से कंधा मिलाकर कार्य करती है और उसमें उसे एक आत्मसंतुष्टि भी मिलती है। उसे अपने जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में कई प्रकार की समस्याओं का मुकाबला करना पड़ता है। सुबह जल्दी उठती है, बसों में धक्के खाती है, दफ्तर में देर हो जाने पर सबका भला–बुरा सुनती हैं। यहाँ तक की दफ्तरों में अपने बाह्य देह शोषण को भी इसलिए स्वीकार कर लेती है कि इससे उसके घर की शांति एवं उन्नति में किसी प्रकार की बाधा उत्पन्न न हो। इस समय के साहित्य में नारी संघर्ष के उज्जवल पक्ष को समाज के सामने रखा है। साथ ही साहित्यकारों ने नारी से संबधित विभिन्न समस्याओं को भी लिया है जिससे आज की नारी अपने विकास में बाधक मानती है जैसे– अशिक्षा, पारिवारिक स्तर पर हेय समझना, दफ्तरों में पुरुषों से कम मानना, बलात्कार की घटनाएँ आदि।

भारतेन्दु युग :–

सन् 1850 में भारतेन्दु युग की स्थापना हुई। भारतेन्दु हरिशचन्द्र इस युग के प्रमुख साहित्यकार थे जिन्होंने हिन्दी साहित्य की विविध विद्याओं में साहित्य रचना की। गद्य का वास्तविक विकास इसी युग से प्रारम्भ हुआ क्योंकि हिन्दी भाषा का परिमार्जित एवं संस्कारित रूप इस युग की रचनाओं में देखा जा सकता है। भारतेन्दु युग से पूर्व हिन्दी साहित्य में भक्ति, श्रृंगार एवं वीरपूर्ण काव्यों की रचना ही होती थी। इस युग में कहानी, उपन्यास, नाटक, निबन्ध जीवनी, देश भक्ति से परिपूरित थी। भारतेन्दु साहित्य एवं इतिहास का वास्तविक लेखन इनके नाम भारतेन्दु हरिशचन्द्र एवं उनके समकालीन कवियों एवं लेखको से प्रारम्भ हुआ।

इस युग में भारत की सामाजिक एवं धार्मिक स्थितियों का अध्ययन करते हैं तो हमें यह मालुम होता है कि समाज कई प्रकार के अंधविश्वासों, कुरीतियों, कुप्रथाओं से झकड़ा हुआ था और उसमें नारी की स्थिति अत्यन्त शोचनीय थी। 1857 की क्रान्ति के बाद नेताओं एवं समाज सुधारकों ने नारी की इस दयनीय दशाओं को महसूस किया कि जब तक नारी जाति को सुधारा नही जाता है तब तक परिवार, समाज एवं देश का वास्तविक विकास नही हो सकता है। राजा राममोहन राय, बालगंगाधर तिलक, विवेकानन्द आदि महान पुरुषों के नारी सम्बन्धी विचार हमें इतिहास में पढ़ने को मिलते हैं। भारतेन्दु हरिश चन्द्र ने भी भारतीय नारी की इसी दयनीय दशा को महसूस किया था उन्होंने सामाजिक कुरीतियाँ जैसे विधवा विवाह, बाल विवाह, स्त्री स्वंतन्त्रता आदि प्रश्नों को अपने साहित्य में उठाया था।

पाश्चात्य सभ्यता के अनुकरण को उन्होंने कभी प्रोत्साहन नही दिया किन्तु अंग्रेजी जीवन प्रणाली में जो ग्राह्य हैं, उनको स्वीकारने में हिचकते नही थे। इस युग में भारतेन्दु हरिशचन्द्र स्त्री शिक्षा एवं स्त्री जागृति के प्रमुख दावेदार दिखाई देते हैं। भारतेन्दु जी ने नर–नारी समानता एवं नारी मुक्ति का नारा इस प्रकार दिया है :–

''जो हरि सोई राधिका जो शिव सोई शक्ति।

IJAMSR

International Journal of Advanced Multidisciplinary Scientific Research (IJAMSR) ISSN:2581-4281

जो नारी सोई पुरुष, जो कछन विभक्ति।।''1

भारतेन्दु युग में अन्य लेखकों एवं साहित्यकारों में प्रताप नारायण मिश्र, बालमूकुन्द गुप्त, राय देवी प्रसाद, ठाकुर जगमोहन सिंह एवं पण्डित बाल कृष्ण भट्ट थे जिन्होंने नारी शिक्षा पर बल देते हुए सशक्त नारी के साथ पुरानी परम्पराओं एवं अंधविश्वासों को दूर करते हुए साहित्य रचना की है। रायदेवीसिंह पूर्ण के अनुसार :–

''नारी के सुधारे जग में प्रसिद होत।

नारी के सवारे होता सिद्ध धन बल है।।''2

किशारीलाल गोस्वामी ने भी नारी चरित्र सम्बन्धी कई उपन्यास लिखे। जैसे लीलावती, राजकुमारी तारा बाई, हृदयहारिणी, चपला, हिराबाई, तरूणी, तपस्विनी, रजिया बेगम, लवंगलता आदि।

द्विवेदी युग :–

1900 से 1920 ई. के काल को द्विवेदी युग कहा गया है। इस युग के प्रमुख प्रवर्तक आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी थे जिन्होंने भाषा के परिनिष्ठित रूप एवं श्रेष्ठ साहित्य रचना के द्वारा हिन्दी साहित्य को अमूल्य योगदान दिया। 1903 में महावीर प्रसाद द्विवेदी ने हिन्दी की प्रसिद्ध पत्रिका 'सरस्वती' का सम्पादन कार्य किया। देश में आर्य समाज एवं ब्रह्म समाज के प्रयत्नों के फलस्वरूप स्त्री शिक्षा का विकास हुआ। राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी भी स्त्री शिक्षा एवं स्त्री उत्थान के लिए निरन्तर प्रयत्नशील रहे हैं। उन्होंने अपने हरिजन पत्र में लिखा है ''मेरे विचार में स्त्रियों की ग्रहस्थिक दासता हमारी सभ्यता का अवशेष है। यही समय है कि हमारा स्त्री समाज इन बंधनों से मुक्त हो जाए। स्त्री का सारा समय घरेलु कार्यों में ही नहीं लगना चाहिए।''1

द्विवेदी युग के कवियों ने नारी अशिक्षा, दोषपूर्ण विवाह प्रथा, पर्दा प्रथा, दहेज प्रथा आदि का विरोध करते हुए रचनायें लिखीं। द्विवेदी जी ने जन मानस को विलास पूर्ण जीवन से हटकर चारित्रिक दृढ़ता की ओर बढ़ाने का प्रयास किया। राजनीतिक दृष्टि से भी नारी को प्रोत्साहित करने का प्रयास किया एवं हिन्दुधर्म की कठोर रूढ़ियों के विरूद्ध लेखनी चलाकर विधवा विवाह को धर्म संगत बताया। इस युग में 'स्तन' एवं 'विवसना' जैसी कविता लिखी गई जिसमें वासना के स्थान पर भावुकता एवं सात्विकता दृष्टिगोचर होती हैं।

पण्डित श्रीधर पाठक ने लिखा –

''अहो पूज्य भारत महिलागण – अहो आर्य कूल नारी

अहो आर्य गृहलक्ष्मी सरस्वती आर्य लोक उजियारी।''1

लाला भगवानदीन ने भारत की वीर प्रसाविनी वीर कन्या तथा वीरवधु का स्वरूप सुन्दर ढ़ंग से प्रस्तुत किया है। पौराणिक तथा ऐतिहासिक वीरनारियों का नारी को अबला कहना उन्हें अस्वीकार्य है।

IJAMSR

International Journal of Advanced Multidisciplinary Scientific Research (IJAMSR) ISSN:2581-4281

''बस नाम तो अबला इन्हें मुनियों ने दिया है

महिलाओं के संग भारी या अन्याय किया है।

जाचा नहि किस धातु का नारी का हिया है।

अमृत की मधुर धारा या विष का बिया है।2

पं. रामनरेश त्रिपाठी ने नारी के देशप्रेम और वीरांगना स्वरूप को चित्रित किया है –

''तुम्हे ज्ञात है कैसा संकट है स्वदेश पर है। प्राणेश्वर

शोभा नही तुम्हें है घर पर रहना इस अवसर पर''3

द्वारिकाप्रसाद मिश्रजी ने भारतीय इतिहास की आदरणीय नारियों यथा रूक्मणी, सत्यभामा, द्रोपदी, मित्रविंदा, जाम्बन्ती इत्यादि में नारी हृदय की आकुलता, दुर्बलता, उदारता आदि का वर्णन किया। हरिऔधजी ने अपने काव्य प्रियप्रवास, वैदही, वनवास, रस कलश, चुभते चौपदे से राधा और सीता जैसी पौराणिक नारियों के विभिन्न रूपों की अभिव्यक्ति की है। प्रियप्रवास की राधा न तो भक्तिकाल की विरह विकला राधा है न रीतिकाल की कामक्रीड़ा कामिनी बल्कि वह आधुनिक युग की लोकसेविका, भारत की भू की अनुपम नारी है। वह प्रेम की अवतार है–

हृदय चरण में तो चढ़ा की चुकी है।

सविधिवरण की थी कामना और मेरी।''1

कृष्ण के मथुरागमन पर विकल राधा कहती है –

''यदि कल मथुरा को प्रात ही जा रहे हैं।

बिन मुख अवलोको प्राण कैस रहेंगे?

युगसम घटिकाएँ वार की बीतती थी

सखी, दिवस हमारे बीत कैसे सकेंगे।''2

प्रियप्रवास में यशोदा का स्वरूप करूणा, वात्सल्य और ममता की त्रिमूर्ति है। कृष्ण के प्रति उसका ममत्व दृष्टव्य है –

''प्रिय पति। वह मेरा प्राण प्यारा कहाँ है?

IJAMSR

International Journal of Advanced Multidisciplinary Scientific Research (IJAMSR) ISSN:2581-4281

दुःख जलधि निमग्ना का सहारा कहाँ है?

अब तक जिसको में देख के जी सकी हूँ

वह हृदय हमारा नेत्र तारा कहाँ है?''3

प्रेमचन्द्र प्रसाद युग –

हिन्दी साहित्य में 1920 से 1936 तक का समय गद्य में प्रेमचन्द और प्रसाद युग के नाम से एवं पद्य में छायावाद के नाम से प्रसिद्ध है। इस युग में कहानी एवं उपन्यास सम्राट प्रेमचंद ने अपनी रचनाओं से हिन्दी साहित्य के भण्डार को भरने का कार्य किया साथ ही महाकवि जयशंकर प्रसाद, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल पण्डित विश्वंभर नाथ, बाबू प्रताप नारायण, श्री वास्तव, श्री जेनेन्द्र कुमार ने सामाजिक उपन्यासों की रचना की। वहीं वृंदावन लाल वर्मा ने ऐतिहासिक उपन्यास लिखे। मुंशी प्रेमचंद ने कई कहानियाँ एवं उपन्यासों की रचना कर युग प्रर्वतक कहलाये और इन्हीं के नाम पर इस काल का नामकरण किया गया। पद्य की छायावादी रचनाओं के प्रमुख कवि प्रसाद, पन्त, निराला एवं महादेवी वर्मा थे। जिन्होंन ं नारी के सूक्ष्म मनोभावों का सुन्दर वर्णन किया है। प्रेमचंद ने कहीं सामाजिक कहानियों एवं उपन्यासों के माध्यम से समाज में फैली हुई स्त्री सम्बन्धी सभी बुराईयों, जैसे – बाल विवाह, दहेज प्रथा, अनमोल विवाह एवं वेश्या समस्या को उजागर करते हुए उसके उपयुक्त समाधान भी प्रस्तुत किए हैं। सेवा सदन, निर्मला, कर्मभूमि, रंगभूमि, गौ–दान आदि उपन्यासों में स्त्री समस्याओं को उजागर किया है। गबन की 'जालपा' गौ–दाम की धनिया, झुनिया, मालती पुरस्कार कहानी में मधुलिका, प्रतिज्ञा कहानी में सामाजिक स्थितियों में वैषम्य के कारण विधवा ब्रजरानी का विवाह न कर पाना, प्रेमाश्रम की गायत्री का जीवन इसके सटीक उदाहरण हैं। इसी प्रकार जैनेन्द्र, भगवतीशरण वर्मा, अज्ञेय आदि ने नारी जीवन की विभिन्न स्थितियों का चित्रण किया है। प्रसाद की श्रद्धा जैनेन्द्र की मृणाल, यशपाल की दिव्या, हरिऔध की है, राधा भगवती शरण वर्मा की चित्रलेखा, तुलसी की गीता, नरेन्द्र शर्मा की द्रोपदी में इसी नारी चरित्र का वर्णन किया है जो कि नारी के प्रति काल निरपेक्ष चितन दृष्टि लिए हुए है।

महात्मा गांधी ने नारी चेतना पर विचार किया और स्वतन्त्रता आन्दोलन में महिलाओं को सम्मिलित कर लिया भारतीय नारी कांग्रेस के राष्ट्रीय आन्दोलन में कुद पड़ी और उसने अंग्रेजो को भी नहीं भारतीय पुरुष वर्ग को भी चकित कर दिया। स्त्री शिक्षा के प्रचार प्रसार के साथ ही सामाजिक कुरीतियाँ ं समाप्त हुई। विद्या का प्रसार पाकर स्त्री स्वतंत्रचेता बनीं। मुक्त नारी में पुरुष को अभिनव सौन्दर्य के दर्शन हुए। छायावादी काव्य पर इसका प्रभाव पड़ा। छायावादी काव्य में पहली बार वैयक्तिक स्वच्छंद प्रेम को अभिव्यक्ति मिली। रीतिकाव्य तक नारी को काम का प्रतीक मानकर घृणा की दृष्टि से देखा जाता था। द्विवेदी युग में वह दया का पात्र बनी लेकिन इस युग में नारी पुरुष के समान्तर खड़ी थी। उसके प्रति पुरुष दृष्टिकोण में व्यापक बदलाव का अनुभव हुआ। छायावादी कवि प्रकृति सौन्दर्य के उपासक थे। प्रकृति में नारी और नारी में प्रकृति देखना उनकी विशेषता रही है। साथ ही आत्मिक सौन्दर्य का अंकन भी किया है। पंत जी कहते हैं

यदि स्वर्ग कहीं है पृथ्वी पर

तो वह नारी उर के भीतर

IJAMSR

International Journal of Advanced Multidisciplinary Scientific Research (IJAMSR) ISSN:2581-4281

निराला न` नारी को प्रेम का आदर्श तो प्रसाद न` सांस्कृतिक माना

विश्वास – रजत – नग – पग तल में

पीयूष – स्त्रोत सी वहा करे।

छायावाद के चार आधार स्तम्भ कवियों के काव्य में नारी के चित्रण को देखना प्रासंगिक होगा।

प्रसाद के काव्य में नारी विमर्श –

छायावाद के प्रतिष्ठापक प्रसाद जी का समस्त साहित्य नारी–मनोविज्ञान की चित्रवीयी है। प्रसादजी भारतीय नारी की दुरवस्था से क्षुब्ध थे उन्होंनें अधिकार विहिन् भविष्यहीन और दयनीय नारी को पुरुष की क्रुरता, अन्याय और अत्याचारों का शिकार बनते देखा था। अतः वे नारी स्वतन्त्रता के समर्थक और उसके अधिकारों के पक्षपाती बनकर साहित्य क्षेत्र में आयें।

नारीमन के कुशल चितरे प्रसाद जी की नारी प्रायः आदर्श–पुंज, वंदनीय, श्रद्धेय और जनमन को प्रभावित करने वाली है। 'आँसू' की अज्ञात नायिका हो या कामायानी की 'श्रद्धा' इसी का प्रमाण है। प्रसाद साहित्य के समस्त पात्र ऐतिहासिक हैं। किन्तु उन्होंने उन पात्रों को प्रासंगिक रूप प्रदान किया है। प्रसाद की अन्यतम कृति ''कामायनी'' आनन्दवाद पर आधृत है। उनका आनंदवाद सांख्यदर्शन और शैव दर्शन पर आधारित है। दोनों धारणाओं का समन्वित रूप प्रसाद साहित्य में मिलता है। उन्होंने नारी की नई परिकल्पना का निर्माण किया है। कामयानी में मनु के माध्यम से मानव सभ्यता एवं संस्कृति तथा मन के विकास का आख्यान है। इसकी दो नारियाँ श्रद्धा तथा इडा की संकल्पना मानव जीवन के अर्धांश के रूप में हुई है। दोनों ही पुरुष रूप में मनु के जीवन को प्रभावित और परिचालित करती है। श्रद्धा सृष्टि विकास की भावना से प्रेरित होकर मनु का वरण करती है। मनु की निराशा को दूर कर वह कर्मवाद का उद्घोष करती है।

और वह क्या तुम सुनते नही

विधाता का मंगल वरदान

शक्तिशाली हो विजयी बनों

विश्व में गुंज रहा जयगान'1

नारी में मां की ममता ही नहीं गुरू की गरिमा भी होती है। अतः श्रदा उपदेश स्वरूप मनु को कहती है।

त ुम भूल चुके पुरुषत्व मोह में,

कुछ सत्ता है नारी की।

IJAMSR

International Journal of Advanced Multidisciplinary Scientific Research (IJAMSR) ISSN:2581-4281

समरसता है सम्बन्ध बनी,

अधिकार और अधिकारी की।।2

निष्कर्ष

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि मृदुला जी अपने उपन्यासों में समस्याओं को सिर्फ चित्रित ही नहीं करतीं वरन उसका निदान भी बताती हैं। वे अपने पात्रों को स्थितियों से संघर्ष करते हुए भौतिकता के धरातल से उठाकर तार्किक दृष्टि के साथ अपने अस्तित्व और इच्छाओं के लिए निर्णय लेते हुए दिखाती हैं। उनकी सभी स्त्री पात्र अपने जीवन का निर्णय स्वयं लेती हैं। वे किसी और के सहारे के लिए प्रतीक्षारत नहीं रहतीं। मृदुला गर्ग ने अपने उपन्यासों के माध्यम से समाज के प्रत्येक वर्ग की स्त्री के संघर्षों का चित्रण कर उसकी दशा और दिशा से पाठक वर्ग को अवगत कराया है। वे अपने उपन्यासों के माध्यम से समाज में स्त्री को वस्तु नहीं मनुष्य के रूप में प्रतिष्ठित करने को तत्पर हैं। हिन्दी कथा साहित्य में उनके उपन्यास पहली बार हीनता–ग्रंथी और अपराधबोध से मुक्त एक कुंठा मुक्त स्त्री–चेतना की रचना करते हैं। मृदुला गर्ग के उपन्यासों में चित्रित स्त्री का यह स्वरूप और स्त्री चेतना का यह स्वर स्त्री विमर्श की भविष्योन्मुखी प्रस्तावना है। मृदुला जी का सबसे पसंदीदा विषय प्रेम है, परन्तु उन्होंने विवाहपूर्व प्रेम की अपेक्षा विवाहेतर प्रेम का चित्रण अपने उपन्यासों में कहीं अधिक किया है। यह वह प्रेम है जिसे समाज ने हमेशा नकारा है और शायद यही कारण रहा है कि उनके 'चित्तकोबरा' उपन्यास को भी विवादों के कठघरे में खड़ा होना पड़ा। हालांकि यह उपन्यास मनुष्य जीवन में प्रेम की सार्थकता सिद्ध करने में तथा उसके विविध वर्णी स्वरूप निर्धारण में बहुत ही अनूठा है तथापि अपने इस उपन्यास में मृदुला जी ने प्रेम का चित्रण जिस रूप में किया है वह कथित तौर पर थोड़ा बोल्ड है। शायद यही बोल्डनेस लोगों को पसंद नहीं आई जिस कारण इस उपन्यास को विवादों से जूझना पड़ा। इस उपन्यास में पुरुष की बराबरी करती स्त्री की देह गाथा और मनः गाथा दोनों का सम्यक चित्रण मिलता है। मृदुला गर्ग ने चित्तकोबरा उपन्यास में पारस्परिकता के विरुद्ध मोर्चा खड़ा करके स्त्री को अनेक तथाकथित मर्यादा बंधनों से मुक्ति दिलाई है। "इस उपन्यास में शीलता और अश्लीलता का प्रश्न उठाकर प्रायः उन समस्याओं से आँखे चुराने की कोशिश होती है, जिनके आधार पर स्त्री को कथित मर्यादा की सीख दी जाती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

* नगेन्द्र : ''हिन्दी साहित्य का इतिहास'', नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 2000
* शुक्ल रामचन्द्र : ''हिन्दी साहित्य का इतिहास'', प्रचारिणी सभा, काशीनगर, 2000
* बिन्दु भट्ट : ''अद्यतन हिन्दी उपन्यास'' पार्श्व प्रकाशन, अहमदाबाद, प्रथम संस्करण 1993
* डॉ. इन्दु वशिष्ट : ''आधुनिक कवि और नारी अस्मिताः संकल्प और महादेवी वर्मा'', अन्नपूर्णा प्रकाशन, कानपुर संस्करण, 1995
* मन्जुल भगत : ''तिरछी बौछारे'', राजपाल एण्ड सन्स, नई दिल्ली, 1997
* कृष्णा सोबती : ''डार से बिछुड़ी'', राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण–1972

IJAMSR

International Journal of Advanced Multidisciplinary Scientific Research (IJAMSR) ISSN:2581-4281

* डॉ. पारूकान्त देसाई : ''आधुनिक लेखिकाओं के नगरीय–परीवेश के उपन्यास'', चिन्तन प्रकाशन कानपुर प्रथम स ंस्करण, 1994
* मन्नू भंडारी : ''मेरी प्रिय कहानियाँ'', राजपाल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2005
* चन्द्रकान्ता वांदिवडेकर : ''आधुनिक हिन्दी उपन्यास सर्जन और आलोचना'', न`शनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1985
* महादेवी वर्मा : ''साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबन्ध'', लोक भारती प्रकाशन, इलाहबाद, 1962